TEXT PROBLEM WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL LIBRARY
OU_182413
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. Accession No.

Author

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.

टूटती शृंखलाएँ

लेखक
महेन्द्र भटनागर

★
★ ★

अगस्त १९४९

कारवां प्रकाशन
६३, बड़ा सराफा,
इन्दौर

मूल्य १॥।)

प्रकाशक
कारवां प्रकाशन
६३, बड़ा सराफा,
इन्दौर

मुद्रक
नन्दकिशोर मित्तल
नवजीवन प्रिंटिंग प्रेस, ६३, बड़ा सराफा,
इन्दौर

"टूटती शृंखलाएँ" शीर्षक कविता-पुस्तक में मेरी ६० कविताएँ संग्रहीत हैं। संग्रह मैंने स्वयं किया है। इन कविताओं का रचना-काल सन् १९४४ से सन् १९४८ तक का है।

ये सभी कविताएँ अधोलिखित पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित हो चुकी हैं :

विशाल भारत, हंस, विश्ववाणी, आगामीकल, रानी, कामना, रक्ताभ, नया कदम, पारिजात, उदयन, आदर्श, जीवन, कर्मवीर, कृषा, कारवाँ आदि।

उज्जैन,
२३ अक्टूबर १९४८

महेन्द्र भटनागर

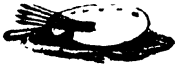

विषय--सूची.

	कविता	
१	सदियों बाद	१
२	स्वातन्त्र्य झंझावात	३
३	ध्वस्त करो	५
४	नई दुनिया	९
५	संग्राम	१३
६	पीयुष-धारा	१४
७	युग विहग	१५
८	जन-समुन्दर	१६
९	मुक्ति की पुकार	१७
१०	अजेय	१८
११	ढहता महल	१९
१२	संक्रान्तिकाल	२०
१३	पाषाण-उर	२२
१४	मानवी-व्यापार	२३
१५	इतिहास	२४
१६	झंझा में दीप	२५
१७	होली जलादो	२७
१८	अभियान के बाद	२८
१९	प्रलय	२९
२०	इन्किलाब	३०
२१	जागरण	३२
२२	परिवर्तन	३३
२३	उद्बोधन	३४
२४	संबल	३५
२५	नया दृश्य	३६
२६	नई रचना	३८
२७	हुँकार	४०
२८	नई निशानी	४१
२९	युग निर्माता	४२
३०	धधकती आग	४३
३१	दुश्मनों को गाड़ता	४४

२	शहीदों का गीत	४६
३	मुझे है याद	४९
४	कला	५१
५	युग कवि से	५२
६	मंज़िल कहाँ ?	५४
७	पिछड़े हुए राष्ट्र से	५५
८	ज़िन्दगी की शाम	५७
९	जब-जब	६४
१०	विश्वास है	६५
११	बहुत हुआ बस रहने दो	६७
१२	मन	७०
१३	कौन से सपने	७१
१४	निशा का युग	७२
१५	जीवन-दीप	७४
१६	रात का आलम	७७
१७	सुनहरी आभा	७९
१८	प्रभात	८१
१९	ज्वार भर आया	८२
२०	ज़िन्दगी	८४
२१	शिशिर-प्रभंजन	८५
२२	नया विश्वास	८८
२३	चाह	९०
२४	धूल-श्री	९१
२५	ध्वंस और सृष्टि	९२
२६	मेरे हिन्द की सन्तान	९४
२७	स्नेह की वर्षा	९६
२८	बदलो	९९
२९	जनरव	१००
३०	पहलीबार	१०२

सदियों बाद

सदियों बाद हिले हैं थर-थर
सामंती युग के लौह-महल;
जनबल का उगता बीज नवल,
धक्के भूकम्पी क्रुद्ध सबल!

सदियों बाद मिटा तम का नभ,
चमका नव संस्कृति में प्रभात,
बीती युग-युग की मृत-रात
डोला मधु-पूरित मलय-वात!

सदियों बाद उठी है आँधी
कर आज दिशाएँ मटमैली,
धूल क्षितिज में अहरह फैली,
शक्ति विरोधी—पंगु अकेली!

सदियों बाद हँसी है जनता
करने नवयुग की अगवानी;
जीवन की अभिरुचि पहचानी,
दफ़नाने को अश्रु-कहानी!

सदियों बाद जगा है मानव
अधिकारों की आवाज लगी,
सुन जग की जनता आज जगी,
दुख, दैन्य, निराशा भगी-भगी!

स्वातन्त्र्य झञ्झावात

चल रहा है वेग से स्वातन्त्र्य-झञ्झावात,
आज जन-जन की पुकारें, अग्नि की बरसात
आज जनबल की दहाड़े, मृत्यु का आघात !

दासता की शृंखलाएँ तोड़ देंगे आज,
घोर प्रतिद्वन्द्वी हवाएँ मोड़ देंगे आज,
निज निराशा, फूट जड़ता छोड़ देंगे आज !

रक्त रंजित लाल आँखें माँगती प्रतिशोध,
खून का बदला मनुज-बल चाहता भर क्रोध,
चाहता जब नाश, कैसा आज लघु अवरोध !

चीरती गिरि से चली है तीर-सी जो धार:
म्यान से बाहर निकल कर विकल है तलवार,
देख जिसको भीत-शोषक-कँप रहा संसार !

झुक नहीं सकते हजारों व्यक्तियों के शीश,
झुक नहीं सकते हजारों नारियों के शीश,
झुक नहीं सकते हजारों बालकों के शीश !

रुक नहीं सकते चरण-दृढ़ द्रोहियों के आज,
मिट नहीं सकते दमन की आँधियों से आज !
इन्किलाबी स्वर दबे कब साथियों के आज !

ध्वस्त करो

सब जर्जर-जर्जर ध्वस्त करो!
चिर जीर्ण पुरातन ध्वस्त करो!

कण-कण निर्बल, क्षीण, असुन्दर,
घुन-ग्रस्त, फटा, मैला, झुक कर,
मिटती संसृति में नूतन बल
प्राणों का जीवित वेग भरो!
सब जर्जर-जर्जर ध्वस्त करो!
चिर जीर्ण पुरातन ध्वस्त करो

जीवन की प्राचीन विषमता,
रूढ़ि सकल, बंधन, दुर्बलता,
दुःख भरे मानव के व्याकुल
अंतर की शंका ताप हरो!
सब जर्जर-जर्जर ध्वस्त करो!
चिर जीर्ण पुरातन ध्वस्त करो!

नई दुनिया

तुम आज विचारों के बल से
जन रच दो दुनिया एक नई।

यह उजड़ा वेष धरा का तो,
यह ग्रहण लगा नभ राका तो,
आँखों को लगता बुरा-बुरा
पीला मानो प्राचीन सुरा,

तुम आज सृजन की घड़ियों में
जन रच दो दुनिया एक नई!

तम के बादल काले-काले
गरज रहे हैं बन मतवाले,
घिरती आज अँधेरी छाया,
घेर रही मन को छल-माया

तुम ज्योतिर्मय नव-किरणों से
जन रच दो दुनिया एक नई!

(उठता आता है धुँआ गगन से,
सीमांत विकल हैं आज दमन से,
शोषक वर्गों का बल संचय
आज पराजित होगा निश्चय,)

तुम आशा नई उर में भर कर
जन रच दो दुनिया एक नई!

संग्राम

आज जीवन की अमरता, सोचना अभिशाप है!

दीर्घ सम्मुख नाश से उलझा हुआ संघर्ष है,
अश्रु के मोती नहीं जब चेतना का हर्ष है,
पंथ पर नूतन चरण की शक्तिमय पद-चाप है!
आज जीवन की अमरता, सोचना अभिशाप है!

आज नूतन की पुरातन पर विजय का नाद है,
सृष्टि-नव-निर्माण अविरत साधना उन्माद है,
वज्र से फौलाद का अंतिम प्रखर आलाप है!
आज जीवन की अमरता, सोचना अभिशाप है!

घोर झञ्झा के झकोरों में मरण से द्वन्द्व है,
प्राण पंछी मत्त है, उन्मुक्त है, निर्बन्ध है,
दुःख ज्वाला से भरे उर का नहीं संताप है!
आज जीवन की अमरता, सोचना अभिशाप है!

बंधनों की अर्गला में बद्ध युग-जीवन नहीं,
भय भरी उर में तरुण के एक भी धड़कन नहीं,
हूह-सा जर्जर की प्रतिद्वन्द्वी गिरा चुपचाप है!
आज जीवन की अमरता, सोचना अभिशाप है!

बन सुदृढ़ संस्कृति सरल नव सभ्यता लो आ रही,
पूर्ण युग-जीवन बदलता औ' बदलती है महा,
नव-लहर से विश्व का कण-कण बदलता आप है!
आज जीवन की अमरता, सोचना अभिशाप है!

पीयूष-धारा

हो गया संसार मरघट, आज कवि ! पीयूष की धारा बहाओ

गिर गये सारे गगनचुंबी भवन लुंठित धरा पर ध्वस्त होकर,
आततायी, अदय, बर्बर, विजन-पथ पर लोटते मृत बन भयंकर,
आज नव-निर्माण की दृढ़ चेतना, दृढ़ प्रेरणा प्रत्येक जन-मन में जगाओ !
हो गया संसार मरघट, आज कवि ! पीयूष की धारा बहाओ !

मौन आहुतियाँ अमित नव बीज भावी विश्व के जो मिट गई हैं,
जूझ मानव राक्षसी मति-गति लहर से खो गए, दुनिया नई है,
सींच प्रतिपल स्वेद, शोणित, स्नेह से युग को नया उर्वर बनाओ !
हो गया संसार मरघट, आज कवि ! पीयूष की धारा बहाओ !

शुष्क पल्लवहीन डालें, साँस उलझीं, सूख जीवन का गया रस,
मनुज के सम्मुख पड़े हैं ढेर शत-शत, नाश का तम, मृत्यु नीरस,
जागरण का तूर्य गूँजे, प्रज्वलित जग, सूर्य सम हो जगमगाओ !
हो गया संसार मरघट, आज कवि ! पीयूष की धारा बहाओ !

युग-चरण विजड़ित नहीं हों, शक्ति आशा-स्वर ध्वनित तूफान बोले,
कोटि हाथों से उठे नव-राष्ट्र जन-मन गर्व से हो जय मुक्त बोले,
रागिनी नूतन, उषा की रश्मि से अब दासता कुहरा हटाओ !
हो गया संसार मरघट, आज कवि ! पीयूष की धारा बहाओ !

युग-विहग

शून्य नभ में युग--विहग तुम
एक गति से ही उड़ोगे
तुम उड़ोगे !

रुक नहीं सकते कभी भी,
पंख उठते और गिरते ही रहेंगे,
थक नहीं सकते कभी भी,
राह पर आ मेघ घिरते ही रहेंगे,
विश्व को संदेश नूतन
मुक्ति का दे, तुम बढ़ोगे,
तुम बढ़ोगे !

शून्य नभ में युग--विहग तुम
एक गति से ही उड़ोगे,
तुम उड़ोगे !

अग्नि --पथ पर, स्वस्थ मन से,
आत्म संबल के सहारे और निर्भय,
पथ--प्रदर्शक, ज्ञान--दीपक,
नव सृजन से, सर्वहारा वर्ग की जय,
युग विरोधी शक्तियों को
तुम चुनौती दे चढ़ोगे,
तुम चढ़ोगे !

शून्य नभ में युग-- विहग तुम
एक गति से ही उड़ोगे,
तुम उड़ोगे !

जन-समुन्दर

अग्नि पथ है, प्रज्वलित लपटें गगन में,
स्वार्थ, हिंसा, लोभ, शोषण, नाश रण में.
चल रहे हैं, पर, चरण युग के निरंतर,
साँस में हुंकारते [illegible] के स्वर,
युग-विरोधी शक्तियों को दे चुनौती

हर कदम पर, हर कदम पर,
बढ़ रहा दृढ़ जन--समुन्दर !

ये चरण युग के चरण हैं, कब झुकेंगे ?
ये शहीदों के चरण हैं, क्या रुकेंगे ?
कौन--सा अवरोध कंपित कर सकेगा ?
पंथ पर तूफान आहें भर थकेगा !
ये करेंगे विश्व नव-- निर्माण बढ़ कर

हर कदम पर, हर कदम पर !
बढ़ रहा दृढ़ जन--समुन्दर !

नाश की ललकार, देती है जवानी,
क्रान्ति का आह्वान देती आज वाणी,
जोश दुदम, रक्त नूतन, ताज़गी है,
युग--युगों की साधना की लौ जगी है,
वेग के सम्मुख ठहरना है असम्भव !

हर कदम पर, हर कदम पर !
बढ़ रहा दृढ़ जन--समुन्दर !

मुक्ति की पुकार

बद्ध कंठ से सशक्त मुक्ति की पुकार !
धैर्य पूर्ण उर सबल
लक्ष्य ओर दृढ़ चरण,
व्यर्थ नाश शस्त्र सब,
व्यर्थ क्रूरता दमन,
झुक सका न शीश, मित सकी न क्षणिक हार !
बद्ध कठ से सशक्त मुक्ति की पुकार !
तीव्र सिंह से गरज,
मेघ से विशाल बन,
फोड़ते निशंक सब,
विश्व के नवीन जन,
लाल-लाल सब जहॉन का बना सिंगार !
बद्ध कंठ से सशक्त मुक्ति की पुकार !
अंध छा गया सघन,
आज पर्व है प्रलय,
राजनीति का कुहर,
भर गया सहज निलय,
फोड़-फोड़ सृष्टि-नाट्य ध्वस्त तार-तार !
बद्ध कठ से सशक्त मुक्ति की पुकार !

अजेय

मुझको मिली कब हार है !
तुम रोकते हो क्यों मुझे ?
तुम टोकते हो क्यों मुझे ?
धधका निराशा की अनल,
तुम झोंकते हो क्यों मुझे ?
हैं अमर मेरे प्राण
मेरा अमर हर उद्गार है !
मुझको मिली कब हार है !

रुकना मुझे भाता नहीं,
थकना मुझे आता नहीं,
सह लक्ष--लक्ष प्रहार भी
झुकना मुझे आता नहीं,
प्रत्येक क्षण गतिवान जीवन,
शक्ति का संसार है !
मुझको मिली कब हार है !

मैं बढ़ रहा तूफान में,
ले क्रान्ति--ज्वाला प्राण में,
वरदान मुझको मिल रहा
प्रतिपद अभय बलिदान में,
नौका भँवर में हो फंसी
साहस अथक पतवार है !
मुझको मिली कब हार है !

ढहता महल

क्रांति-युग प्रत्येक मानव-वर्ग का संघर्ष,
है कहाँ जन-मुक्ति सुख, स्वच्छन्दता का हर्ष ?

क्रूर, बर्बर घोर हिंसक, नाश-नर्तन, द्वन्द्व,
शक्ति जन की व्यस्त, जीवन-मुक्ति के पट बंद ।

कौन छाया-सा भयंकर दिखता है घूर,
ठीक सिर पर आ गया जो था अभी तक दूर ?

बद्ध खूनी लाल पंजे में हुआ समुदाय,
चीखता, रोदन करुण, नत प्रतिनिमिष निरुपाय ।

स्वार्थ औ' पाखंड-संस्कृति, दीर्घ भय मय भूत,
पत्र, मिल, पूंजी, सबल कर, जाल सा बुन सूत ?

फल गई मकड़ी, समाजी-तन, अकथ घुल क्षीण,
हो रहा जर्जर, धँसी ले आँख पीली दीन !

पर, विजनता उत्तरी-ध्रुव से उठी आवाज;
देखता हू विश्व, केवल रूस जनता राज !

दे रहा साहस, दिशा, संबल, सृजन की शक्ति,
स्तम्भ मानवता सुदृढ़ जन विश्व भर की भक्ति

संक्रान्ति-काल

त्रस्त जीवन, खलबली चहुँ ओर, अस्तव्यस्त व्याकुल प्राण !

छोड़ता हूँ आज जर्जर क्षीण, मृत प्राचीन संस्कृति प्यार,
आज उजड़े खण्डहरों पर फिर बसाने दो नया संसार,
स्तब्धता, सुनसान, पथ वीरान, गुंजित हो नयी झंकार,
आज फिर से नव सिरे से चाहता हूँ विश्व का निर्माण !
त्रस्त जीवन, खलबली चहुँ ओर, अस्तव्यस्त व्याकुल प्राण !

व्योम कुहराछन्न, भीषण तम घिरा, कंपित गगन भयभीत,
विश्व आंगन में मचा रोदन, खड़ी है दुःख की दृढ़ भीत,
राह जीवन की विषम है, हो रही जग नाश की सब रीति,
सूर्य किरणों से खुलें सब द्वार, जीवन हर्ष हो उत्थान !
त्रस्त जीवन, खलबली चहुँ ओर, अस्तव्यस्त व्याकुल प्राण !

सभ्यता कल्याणमय, सुखमय, नवल, निर्मित सबल हो नींव,
एकता आधार पर जग के खड़े हों जी सकें सब जीव,
भ्रान्त पूंजीवाद, तानाशाह, भीषण फूट फोड़े पीव,
शक्ति दुर्दम चाहता जिससे कि मैं यह दे सकूँ वरदान !
त्रस्त जीवन, खलबली चहुँ ओर, अस्तव्यस्त व्याकुल प्राण !

रूढ़ियों की जटिल जकड़ी लौह-कड़ियाँ झनझना कर तोड़,
अंध सब विश्वास घेरे सर्प से मन को निमिष में छोड़;
सभ्यता की डाल पर पटकी कुल्हाड़ी आज दी है मोड़,
ध्वंस हो गिरती दिवारों पर लगा है गूंजने मधुगान !
त्रस्त जीवन, खलबली चहुँ ओर, अस्तव्यस्त व्याकुल प्राण !

शक्ति का संग्राम, सागर में उठा है उच्च भीषण ज्वार,
तीव्र गति से टूट द्वीपी तट, प्रखर बढ़तीं अनेकों धार,
शक्ति जन-जन की लगी है आज किंचित मिल न सकती हार,
कौन कुचलेगा जगत में सर्वहारा-वर्ग का अभिमान ?
त्रस्त जीवन, खलबली चहुँ ओर, अस्तव्यस्त व्याकुल प्राण !

ध्येय है आगे चरण पथ पर बढ़ेंगे है न कोई रोक,
स्वत्व का, अधिकार का संघर्ष झञ्झा-सा न कोई टोक,
क्रान्ति की जलती भभकती अग्नि में जब तन दिया है झोंक,
है न कोई मोह ममता का, प्रलोभन का कहीं सामान !
त्रस्त जीवन, खलबली चहुँ ओर, अस्तव्यस्त व्याकुल प्राण !

जग बदलता है, जगत् का हर मनुज बदला बिना अवरोध,
मानवी गुण सभ्यता में हो रहा प्रतिपल निरंतर शोध,
साधना दृढ़ शत संयम से बँधी पागल नहीं है क्रोध,
मिल रहे जन राष्ट्र शोषण लूट भक्षक नीति का अवसान !
त्रस्त जीवन, खलबली चहुँ ओर, अस्तव्यस्त व्याकुल प्राण !

है कठिन जीवन प्रहर, नूतन पुरातन का मचा संघर्ष,
शेर-सी क्रोधित उमड़ जूझी विरोधी शक्तियाँ दुर्द्धर्ष,
पर, छिपा है युद्ध के पीछे मनुजता का सरल सुख हर्ष,
है चुनौती आज जीवन के लिए स्वर द्रोह रण आह्वान !
त्रस्त जीवन, खलबली चहुँ ओर, अस्तव्यस्त व्याकुल प्राण !

पाषाण-उर

आज मानव उर बना फौलाद-सा-पाषाण !
खून से विचलित नहीं होते मनुज के प्राण !

जल गया है अग्नि में मधु स्नेह,
रिक्त अंतिम बंद, जर्जर देह,
गिर रहा दुख के घनों से मेह,
टूट कर ढहता सुरक्षित गेह,
कष्ट कंटक-आपदाओं में फँसी है जान !
आज मानव-उर बना फौलाद-सा-पाषाण !

बढ़ रही है विश्व भक्षक प्यास,
पी चुका इतना कि अटकी साँस,
है नहीं कोमल अधर पर हास,
क्रूरता, हिंसा नहीं विश्वास,
टूटती प्रति स्वर कड़ी ओ' कर्णभेदी गान !
आज मानव-उर बना फौलाद-सा-पाषाण !

उड़ रही मरु-सी विजनता धूल,
सूख मुरझा साथ उड़ते फूल,
वृक्ष उन्नत ध्वस्त हो आमूल,
डूब जल में सब गया है कूल,
नाश का ज्वालामुखी फूटा, कहाँ निर्माण ?
आज मानव-उर बना फौलाद-सा-पाषाण !

मानवी-व्यापार

मानवी--व्यापार कितनी दूर !

दूर जन-जन से सहज उमड़ा हुआ मधु प्यार,
दूर जन-जन से सरल, सुख, शांति का संसार,
हो रहा प्रत्येक मन का आत्म-गौरव चूर !

मानवी--व्यापार कितनी दूर !

चाहता मानव कि भरलू स्वर्ण-निधि से कोष,
हो रहे अभियान निर्भय, पर, नहीं संतोष,
मानवी-बल व्यस्त हिंसा, नाश से भरपूर !

मानवी--व्यापार कितनी दूर !

नाजियों-सा काफिला बन कर रहा प्रस्थान,
सत्य-शिव-सुन्दर जताने, सर्वनाशक गान,
देखते बरबाद करने के घृणित ग्रह घूर !

मानवी--व्यापार कितनी दूर !

आततायी शक्ति का सूरज कहाँ है अस्त ?
आज ज्वाला ग्रस्त दुर्बल अंग जग का त्रस्त,
आज तो पथभ्रष्ट मानव, नृत्य खूनी क्रूर !

मानवी--व्यापार कितनी दूर !

इतिहास

विश्व अस्थिर, प्रति-चरण पर
बन रहा है नित्य नव-इतिहास !
क्षण गिराते जा रहे हैं,
क्षण मिटाते जा रहे हैं,
आज देशों को धरा से,
युद्ध की गढ-कन्दरा से,
व्यस्त अविरत राष्ट्र अगणित;
ले रहे कुछ क्षीण अंतिम साँस !
विश्व अस्थिर, प्रति-चरण पर
बन रहा है नित्य नव-इतिहास !
आज उन्नति के शिखर पर,
हार कर निज शक्ति खोकर
पद दलित हो रजकणों सम
सब धराशायी हुए, भ्रम.
खिल रहा उजडे चमन में
भव्य आशा का नवल मधुमास !
विश्व अस्थिर, प्रति-चरण पर
बन रहा है नित्य नव-इतिहास !
नीतियाँ अपवाद कितने,
भिन्न जग के नाद कितने,
दे रहीं प्रतिपल सुनाई
आज जोरों से मनाही !
बढ़ रही मन में निरंतर
मनुज के आ विश्व-भक्षक प्यास !
विश्व अस्थिर, प्रति-चरण पर
बन रहा है नित्य नव-इतिहास !

झञ्झा में दीप

आज तूफानी निशा है
किस तरह दीपक जलेंगे !

तीव्र गति से दौड़ती है
शून्य नभ में मुक्त झञ्झा,
शीर्ण पत्रों-सी बिखरती
चीखती नत त्रस्त जनता,
क्योंकि भीषण ध्वंस करतीं
आँधियाँ नभ से चली हैं,
क्योंकि सिर पर गिर भयावह
बिजलियाँ युग की जली हैं,
छा गए बादल सघन ये
नाश करके ही टलेंगे !
आज तूफानी निशा है
किस तरह दीपक जलेंगे !

आज जन जन को जलाना है
न निज गृह दीप माला,
आज तो होगी बुझानी
सर्व-भक्षक विश्व-ज्वाला,
तम धुंआ छा प्रात दिशा में
घिर गया काला अँधेरा

युग--युगों का मूल्य संचित
मिट रहा, रोदन भरा स्वर,
कर्ण भेदी लाल अंगारे
स्वयं फट कर चलेंगे !
आज तूफानी निशा है
किस तरह दीपक जलेंगे !

एकता की ज्योति हो जिससे
मिलें मधु स्नेह अविरल,
और तूफानी घड़ी में
जल सके लौ मुक्त चंचल,
शक्ति कोई भी न सकती
फिर मिटा, चाहे रुष्ट हो
विश्व का हिंसक प्रलयकारी
भयंकर नाश गढ़ हो,
फिर न किंचित आँधियों में
दीप-जीवन के बुझेंगे !
आज तूफानी निशा है
किस तरह दीपक जलेंगे !

होली जलादो

आज मेरे देह की होली जलादो

घिर गया जब घोर अँधियारा गगन में
घुट गए हैं प्राण सदियों की जलन में,
विश्व ज्योतिर्मय करो, भावी मनुज को
आज मेरे देह की होली जलादो!

ज्वाल की लपटें रमालें अश्रु-सागर,
हो अशिव सब भस्म जग का मौन कातर,
जीर्ण उर, यह शीर्ण चोला भी गलादो!
आज मेरे देह की होली जलादो!

रक्त घृत हो, हड्डियाँ इन्धन बनेंगी,
फिर शिराएँ अग्नि की धू-धू उठेंगी,
जो करेंगी प्रति असुन्दर कण बतादो!
आज मेरे देह की होली जलादो!

ज्वाल होगी जो कयामत तक जलेगी,
सूर्य सी जल भू गगन रोशन करेगी,
इसलिए, युग नाश से मुझको मिटादो!
आज मेरे देह की होली जलादो!

मैं जलूँगी भव्य शोभा संचिता हूं,
घेर लेना विश्व तुम मेरी चिता को,
शीश अपना फिर कुतूहल से झुकादो!
आज मेरे देह की होली जलादो!

अभियान के बाद

आज जन-जन के थकित स्वर !

रक्त की नदियाँ बहा कर
दिग-दिगन्तों को हिला कर
आँधियाँ जग में उठा कर
आज जन-जन के व्यथित उर !
मुक्त युग-खग के दमित पर !
आज जन-जन के थकित स्वर !

होम वैभव कर निरंतर
मृत्य दानव का भयंकर
हो चुका निर्दय अवनि पर
नाश हिंसा से चकित हर !
विश्व में मानों जड़ित डर !
आज जन-जन के थकित स्वर !

प्रलय

उजड़ा पड़ा सारा नगर,
सूनी पड़ी सारी डगर,
चिड़ियाँ तृषित सहमी खड़ी,
कुटियाँ सकल टूटी पड़ी,
छायी अवनि-आकाश में दहशत!

आ सनसनाता है पवन,
क्रोधित प्रखर धधकी जलन,
ज्वालाग्रसित अगणित सदन,
उर्वर हुआ सूखा विजन,
दृढ़ उच्च दुर्ग का बन गया पर्वत!

कण-कण गया भू का सिहर,
उर में बही भय की लहर,
हिंसक बड़े जब घिर अमित
क्रन्दन, मरण जन-जन दमित,
दुर्बल जगत सारा हुआ आहत.

इन्किलाब

ग्रस्त सदियों के घृणित इतिहास पर छा
क्रांन्ति की लपटें धधकती हैं भयंकर!
रुद्ध प्राणों के दमन से बंद थे पट
टूट कर गिरते अवनि पर डगमगाकर!

न्याय के स्वर पर दबी थी विश्व जन-जन
की करुण दुख से भरी वाणी रुलाई,
वह कहीं से राह पाकर फूट निकली
है व्यथा से चूर्ण--रक्षा की दुहाई!

फूट निकली हैं उमड़ती एक के उप-
रांत सरिताएँ विजन खोयी हुई सी,
फूट निकला है कि लावा गर्म भीषण
गर्भ भू से विषमता धोयी हुई सी!

आज जीवन-मुक्ति का आव्हान आया
सुप्त जगती के कणों में चेतना है,
धमनियों में रक्त का संचार अविरत
लौह-सा बल, वेग दुर्दम भर गया है!

शक्तियाँ नूतन जगत निर्माण करने
बढ़ रही हैं सभ्यता आदर्श पर जो,
विश्व के कल्याण की साक्षी बनेंगी
इन्किलाबी द्रोह का संगीत स्वर जो।

आँधियाँ काली क्षितिज पर उड़ रही है,
जीर्णता प्राचीन मिटती जा रही है,
हो रहे कोमल नए विकसित अवनि पर,
सृष्टि नूतन वेष प्रतिपल पा रही है।

देश और समाज की सब नीतियाँ मिट
नव, सरल शासन व्यवस्था बन रही है,
लूट, शोषण की प्रथा में अग्नि दे कर
एक नूतन भव्य दुनिया बन रही है।

भव्य दुनिया वह कि जिसमें रह सकेंगे
सम दुखों में, सम सुखों में वर्ग सारे,
भव्य दुनिया वह कि जिसमें रह सकेंगे
आपदा उत्थान में सब एक-सा ही वेष धारे।

जागरण

संसार के तरुण जगे,
प्रत्येक के नयन जगे,
विद्रोह-अग्नि से दिशा जली,
दिशा जली !

हुंकार जन-चरण बढ़े,
ललकार जन-चरण बढ़े,
लो साम्य-सूर्य से निशा मिटी,
निशा मिटी !

सब गिर गईं दिवारें हैं,
दृढ़ जेल मुक्त द्वार है,
नव विश्व-सृष्टि से —उषा जगी,
उषा जगी !

परिवर्तन

दुनिया का कण-कण परिवर्तित,
गूंजा जीवन-संगीत नवल,
प्रतिक्षण सुन्दरतर निर्मित हित
है व्यस्त सतत जन-जन का बल।

सदियों का सोया जागा है,
युग-मानव नव बन आया है,
जल जाएगा विश्व अशिव सब
यह अनबुझ ज्वाला लाया है।

मिथ्या विश्वासों के शव पर
नव-संस्कृति का है तेज प्रखर,
पिछड़ी खोई मानवता को
फिर से निश्चल सुख प्राप्ति अमर

आँसू, लूट, नाश का निर्मम,
रक्तप्लावित इतिहास गया
क्षत-विक्षत हृदयों की, फिर से,
जर्जरता का निर्माण नया

उद्‌बोधन

जीवन मुक्त करो।

सदियों की बद्ध शृंखला,
निष्क्रियता मय घूर्ण कला,
तमसावृत रात्रि-अर्गला,
नूतन रवि-रश्मि प्रखर से सब छिन्न करो।
तन-मन मुक्त करो।

जन-जन पीड़ित अपमानित,
बन्धन-ग्रस्त, अवनि लुंठित,
असफल, हर बार पराजित,
स्वाभिमान मर्माहत, जड़ता भंग करो।
जन-जन मुक्त करो।

ठोकर, क्षुधा, अभाव, मरण,
कटु जीवन का सूनापन,
लज्जा का इतिहास दमन,
सामूहिक हुंकारों से विद्रोह करो।
जग को मुक्त करो।

संबल

प्रगति ही ध्येय जीवन का बना संबल।

गहन जीवन-समुन्दर में रहीं प्रतिवार उठ-गिर वेग से लहरें,
बना सुख-दुख किनारे जिन्दगी बहती सरल-दृढ़ बन बिना ठहरे
उमड़ते ज्वार के सम्मुख थिरक कर रोम कंपित हो नहीं सिहरे,
जटिलता राह की कब कर सकी दुर्बल।
प्रगति ही ध्येय जीवन का बना संबल।

झुका सब शीश मानव का निमिष भर पत्थरों की चोट से शापित;
हुआ कब धैर्य जीवन का, सबल युग-प्राण का किंचित यह विगलित;
प्रहारों से हुआ दैदीप्य मुख, बढ़ती गई तन कांति हो ज्योतित,
सतत युग-साधना-व्रत चल रहा अविरल।
प्रगति ही ध्येय जीवन का बना संबल।

हिमालय-सी अड़ीं निश्चिन्त बाधाएँ सुदृढ़तम रोककर, पड़कर,
बरसते लाल शोले आसमां से विश्व का आँसू भरा सागर,
गिरा देना कठिन पथ पर हवाएँ चाहतीं बहतीं प्रखर मर-मर,
चरण, पर, बढ़ रहे हैं, ज्वाल में जल-जल।
प्रगति ही ध्येय जीवन का बना संबल।

बनी तूफान स्वर साथिन अमर यौवन भरी ललकार यह मेरी,
शिरा-सी वायु में कम्पित चमकती तीक्ष्ण बन तलवार यह मेरी,
हिला देगी सुदृढ़ पर्वत-शिखा अन्याय का, हुंकार यह मेरी,
हृदय में आग नवयुग की मची हलचल।
प्रगति ही ध्येय जीवन का बना संबल।

नया दृश्य

सामने सौ-सौ विपथ के मृदु प्रलोभन,
घेर साधक को भ्रमित कर, मान-मर्दन;

मुक्ति औ' स्वच्छन्दता का उर दबाकर,
बाँसुरी तम-युग विजन की कटु बजाकर,

जो सफलता पर अशिव की गा रहा है,
समय उसका भी मरण का आ रहा है।

हो चुका बस युग-युगों का नाश नर्तन,
आज अंतिम स्वर, खुलेंगे पाश बंधन।

आज गूंजेगी गगन में, शुद्ध मानव
[illegible] शक्तिशाली और अभिनव।

दे सकेगी पीड़ितों को सुदृढ़ संबल,
विश्व के सब शोषितों का स्नेह निश्छल।

ये प्रताडित नत दुखी बेचैन जन-जन
सुन सकेंगे तूर्य सुख, नव-उच्च-जीवन।

भंग निद्रा कर जगेगी सुन मनुजता,
कर्म पथ वाहक मिलेगी प्रति सरलता।

चिह्न नवयुग के प्रखर देते दिखाई,
धर्णी जग में ज्योति नूतन आ समाई.

इस घड़ी में विश्व का कण-कण बदलता,
इस घड़ी में विश्व का जन-मन बदलता।

आज परिवर्तित हुआ प्रत्येक जग स्वर,
इस बदलती शुभ घड़ी में जाग 'सुन्दर'।

आज जर्जर रूढ़ि स्वर देता न शोभन,
आज कवि का हो नया ही भाव-चित्रण।

नई रचना

नवीन-ज्योति की किरण
सुदूर व्योम से,
सघन युगीन अंधकार छिन्न-भिन्न कर
उतर रही, मिटा निशा।
चमक उठी दिशा-दिशा।

नवीन मेघ की झड़ी
सुदूर व्योम से बरस पड़ी।
नहा गया नगर,
नहा गई गली-गली।
बहा गई सभी पुराण जीर्णता गली-सड़ी।

बरस रही नए विचार की झड़ी।
नहा रहा मनुष्य विश्व का
विकास पंथ द्वार पर।
कि अब समाज पात से नवीन बन गई कली।
कि हो रहा—
कि अब खिली! कि अब खिली।

नवीन गंध से भरी हवा,
सुदूर व्योम से,
अशेष वेग से
प्रवेश मुक्ति द्वार के रहस्य का बता गई।
प्रयास प्रयत्न के लिए
अथक, अशांत शक्ति दे गई।
नितांत झुक गया विपक्ष बल

उभर रहा समाज का नवीन शृंग,
बन रहा नया विधान,
जन-प्रधान,
ध्वंस-सृष्टि संग-संग !
नई रचना, नया विधान.

हुंकार

हूंकार हूं, हुँकार हूं।
मै क्रान्ति की हुँकार हूं।
मै न्याय की तलवार हूं।

शक्ति, जीवन जागरण का
मै सबल संसार हूं।
विस्तार का, विद्रोह का
मै तीव्र गामी ज्वार हूं।

फिर नए उल्लास का
मैं शांति का अवतार हूँ।
हुँकार हूँ, हुँकार हूं।
मै क्रान्ति की हुँकार हूं।

नई निशानी

युग की प्रति साँसों पर, रूढ़ि, पुरातन हावी,
पर, निश्चय नव किरणों से चमकेगा भावी ।

प्रतिद्वन्द्वी, प्रतिगामी, प्रतिध्वनि सकल विरोधी
तम का परदा काला दुर्गमता अवरोधी ।

नव-लहरों के अविरल धक्कों से हो आहत,
हो जाएगा सभी प्रगति के चरणों पर नत ।

युग गति का वेग असह्य, दुर्जय, भारी दुर्दम,
सतत प्रखर जिसके हैं विद्युतमय सबल कदम ।

चट्टानें तड़क उठीं भीषण स्वर कर, लुण्ठित,
झञ्झा के पीछे हो खंडित शिथिल पराजित ।

टूटीं जटिल सभी आज समाजी सीमाएँ,
धू-धू कर धधक रही प्राचीन विषमताएँ ।

भू कंपन से उखड़ी जातीं जड़ें पुरानी,
दीख रही खेतों पर उगती नयी निशानी ।

एक नई दुनिया का संदेश सुना जग ने,
सावधान हो जन-मन सब त्रस्त जगे लगने।

सत्य प्रखर हो सम्मुख आया मानवता के,
स्वर फूट पड़े चहुँ ओर नई ही समता के।

परिवर्तन, विप्लव युग, है व्यस्त सतत मानव,
लाने को अवनी पर ज्योतिर्मय युग अभिनव।

युग निर्माता

झञ्झा में भूले वह जिसको निज पथ की पहचान।
आग जलाकर चले वही जिसके चहरे पर मुस्कान।

जगमग जिसके नेत्र कि जिसमें जीवन तीव्र प्रकाश,
धड़कन उसके उर में जिसमें भावी की है आश,
सुप्त पड़ा निर्जीव वही जिसका तन ठंडी लाश,
गंभीर हिमालय सा वह जिसका है शीश महान।
झञ्झा में भूले वह जिसको निज पथ की पहचान।

ज्वाला जिसके अंग--अंग में, है प्राणद-संदेश,
युग--निर्माता वह जिससे दूर नहीं हो जीवन--क्लेश,
सैनिक वह ही केवल जिसका सुदृढ़ अहिंसक वेष,
युग-संचालक, स्वर फूटे, जब छाया हो सुनसान।
झञ्झा में भूले वह जिसको निज पथ की पहचान।

तलवार वही साधक जिससे कँपता हो संसार,
ढह कर गिर जाए झट, सरके वह आधार,
तूफानी सागर में खेले ऐसी हो पतवार,
ऐसा हो जग की जनता के नेता का अभिमान।
झञ्झा में भूले वह जिसको निज पथ की पहचान।

धधकती आग

गीत गाने के लिए मेरे विकल हैं प्राण।

क्षितिज रेखा पर दिखाई दे रहे हैं
आज उजड़े विश्व के कुछ दाग,
और चारों ओर धधकी विश्वव्यी
भीषण मचल कर नाशकारी आग।
ध्वंस का अभिशाप हट—तो सृष्टि का वरदान।
गीत गाने के लिए मेरे विकल हैं प्राण।

चीत्कारें करुण देतीं हैं हिला पाषाण
उर फौलाद—सा झकझोर,
मनुज का उन्माद पागल बन
धुँआ ज्वालामुखी-सा फट रहा है घोर,
मिटगया है आत्म-मानव का, सकल अभिमान।
गीत गाने के लिए मेरे विकल हैं प्राण।

देखता हूं, हो रहा है घोर बर्बर नृत्य
ताडव हिंस्र निर्मम ध्वंस,
देखता हूँ, हो रहे हैं राख
जिंदा तड़प मानव तोड़ कर दम ध्वंस,
दीखते दीवार पर क्षण-क्षण करुण आख्यान।
गीत गाने के लिए मेरे विकल हैं प्राण।

दुश्मनों को गाड़ता हुआ !

हो रहा है दुंदभी का घोष द्वार-द्वार पर,
हिल रहीं हैं सुप्त कब्र- कब्र नव पुकार पर ।
पूर्व रूप पर नवीन शक्ति जैतवार है,
दर्प की शिला तड़क रही नया प्रहार है,
जिन्दगी ने कर दिए दलित सशक्त कटघरे
भूमि पर गिरा दिए कुताधि पात्र विष भरे।
तारतम्य रोशनी सदृश अटूट चल रहा,
दाघ दाझना से मिट रहा विपक्ष बल महा ।
आफ़तों के बादलों का झुक गया है गर्व शिर,
और गर्जनों का है दहाड़ता हुआ विलीन स्वर,
आ रहा है युग नया-नया लथाड़ता हुआ,
दुश्मनों की मौत कर, जघन्य गाड़ता हुआ ।

शहीदों का गीत

यह शहीदों का अमर-पथ
रोकना इसको असम्भव ।
मेटना इसको असम्भव ।

चल रहे जिस पर युगों से
दृढ़ चरण शत-शत निरंतर,
एक धुन है, स्फूर्तिमय क्रम
गान में ले प्रलय का स्वर ।
मध्य की अठखेलियाँ
तूफान, झंझावात अगणित,
ये थके कब, ये रुके कब
ये झुके कब जान के हित ?
चल रहे अविराम गति से
रोकना इनको असम्भव ।
यह शहीदों का अमर-पथ
रोकना इसको असम्भव ।
मेटना इसको असम्भव ।

रोक सकते राह के कंटक
नहीं रोड़े नहीं भय,

तिमिर भी क्या कर सकेगा
हो चुका पथ पूर्व परिचय,
शृंखलाएँ बंधनों की
तोड़ने ये बढ़ रहे हैं,
स्वत्व के संग्राम में जो
मुक्त होने लड़ रहे हैं।
ये अमर बन मिट रहे हैं
रोकना इनको असम्भव।
यह शहीदों का अमर-पथ
रोकना इसको असम्भव।
मेटना इसको असम्भव।

वेदना शत-शत मरण दुख,
अश्रु, ममता, प्यार, क्रन्दन,
ला नहीं सकते निराशा
मोह के अविराम साधन,
दण्ड, अत्याचार, पशुबल,
क्या मरण हथियार भीषण
कर सकेंगे मुक्ति--पथ से
ये विपथ, जब है अचल मन?
हो चुकी भीषण परीक्षा
रोकना इसको असम्भव।
यह शहीदों का अमर-पथ
रोकना इसको असम्भव।
मेटना इसको असम्भव।

विश्व के कल्याण की ये
भावना साकार करने,
मुक्त--जीवन की प्रखरता
को बसा, दुख क्लेश हरने,

ये जगे जब-जब जगत में
न्याय के रव को दबाया,
ये रहे बस मौन जब-तक
जोर शोषण ने न पाया,

शक्तिमय हुँकार इनकी
रोकना जिसको असम्भव।
यह शहीदों का अमर-पथ
रोकना इसको असम्भव।
मेटना इसको असम्भव।

मुझे है याद

मुझे है याद तेरा क्रूर पागल रूप हत्यारा,
बहायी थी जमींपर बेरहम जब रक्तकी धारा,
जलाए गाँव थे पूरे, उजाड़ी बस्तियाँ अगणित,
मुझे है याद जुल्मोंका दमन इतिहास वह सारा।

नयन जिनने कि तेरी दानवी तस्वीर देखी है,
हृदय जिसने असह घुटती हुई वह पीर देखी है,
कभी क्या भूल सकती है दुखी आहें गरीबों की
कि जिनने मूक मिटने की सदा तकदीर देखी है।

बगावत के गगन में मुक्त हो झण्डे उठाये हैं
शहीदी शान से जिनने अभय हो सिर कटाए हैं,
चरण जिनके सदा गतिशील आगे ही उठे दुर्दम,
सतत संघर्ष में हरबार जिनने घर लुटाए हैं।

जलनकी आग जो धधकी हृदय रह-रह जलाती है,
कहानी सिसकियां आँसू भरी निर्मम सताती है,
चुनौती आज देता है सबल पुरुषार्थ यह मेरा,
कि साँसे हर घड़ी तूफान के धक्के बुलाती है।

कि तेरे राज में हमने जवानी को मिटाया है।
ठिठुरते नग्न बच्चों को सदा भूखा सुलाया है।
सुनहली भव्य जीवन स्वप्नकी दुनिया बनाने की
हमारी कामना को धूल में तूने मिलाया है।

जला देगी नयनके आंसुओं से फूटती ज्वाला—
सभी बंधन विषमताके, अबुझ प्रतिशोधकी हाला।
हमारी धमनियों में रक्त की नूतन भरी लहरें—
प्रहारों से मिटा प्रत्येक शोषक कर्म मतवाला।

कला

जो सुदूर स्वप्न-राज्य की विहारिका,
व्योम पार देश की रही निहारिका,
कर्म-मार्ग हीन, स्वर्ण-विश्व साधिका,
द्वन्द्व से विमुख, सदा नवीन बाधिका –
हेय व्यर्थ युग-उपेक्षिता अमर कला।

धूल से विलग विचार वास्तविक नहीं,
झूठ शब्द-जाल-चित्र मात्र है वहीं—
जो मनुष्य भाव-राग से जुड़ा न हो,
दर्द-हास तार से सहज बुना न हो,
कब समाज में टिका ? कहाँ अरे चला ?

व्यक्ति सिर्फ आज के सवाल चाहिएँ,
तम नहीं प्रभात लाल-लाल चाहिए
व्यक्ति की करुण-कराह है उतारनी,
आग जो दबी उसे पुनः उभारनी
सब कुरीतियाँ मिटे, प्रहार जलजला।

भावना निराश ना मृतक समान हो,
अश्रु औ' रुदन नहीं, न मोह गान हो,
आज जीर्ण देह तोड़ता मजूर है—
पर, समानता समय बहुत न दूर है,
कवि मुखर कहो! य' किसलिए कला भला ?

युग कवि से

वे मृत गीत नहीं गाने हैं ।

जो स्वर का साथ नहीं देंगे;
गिरते को साथ नहीं देंगे,
पीड़ित और उपेक्षित, व्याकुल
जनता के भाव नहीं लेंगे,
युग कवि को जीवन के ऐसे
हरगिज गीत नहीं गाने हैं ।
वे मृत गीत नहीं गाने हैं ।

अवरुद्ध जगत का आवाहन,
पार क्षितिज का मादक बंधन,
मधु तारों का पहले सुनना
मूक स्वरों का मौन-निमंत्रण,
निर्जीव अचेतन वाणी से
ऐसे गीत नहीं गाने हैं ।
वे मृत गीत नहीं गाने हैं ।

जिनमें जीवन का वेग नहीं,
जिनकी दुनियाँ है दूर कहीं,
जो मनुज हृदय को शिथिल करे
जो बदल न पाए आज मही,

प्राणों की दुर्बलता के वे
रोदन गीत नहीं गाने हैं ।
वे मृत गीत नहीं गाने हैं ।

ये छन से निकले झूठे स्वर,
हो न सकेंगे ये कभी अमर,
जब-तक सुख-दुख का अनुभव कर
न कहेंगे जीवन—सत्य प्रखर,
अनुभूतिहीन अन्तर से वे
थोथे गीत नहीं गाने हैं ।
वे मृत गीत नहीं गाने हैं ।

मंज़िल कहाँ ?

है अभी मंजिल कहाँ ?

चल रहा हूं राह पर अभिनव लिए विश्वास,
लक्ष्य का मिलता नहीं किंचित कहीं आभास·
द्रौपदी के चीर सा यह बढ रहा है पथ
इति कहाँ ? बीता नहीं दुर्गम अभी तक अथ
छोर का अंचल कहाँ ?
है अभी मंजिल कहाँ ?

रात के घनघोर तम में हिल रहे हैं पेड,
भूत सी लगती विजन में खेत की ये मेड·
विश्व को उल्लू भयंकर शाप लाया है।
रात रानी कोप का क्षण पास आया है।
चाँद का संबल कहाँ ?
है अभी मंजिल कहाँ ?

जूझना है जो खड़ी हैं सामने चट्टान,
आज करना बद्ध जीवन का नया निर्माण;
दूर जाना है अथक साहस चरण के बल,
ज्योति अंतर की जगाकर वेग से अविरल।
नव-सृजन-बादल कहाँ ?
है अभी मंजिल कहाँ ?

पिछड़े हुए राष्ट्र से

पिछड़े हुए हो तुम
बढ़ो, आगे बढ़ो
जब बढ़ रहा संसार ।

नव-विश्वास, नूतन ध्येय संस्कृति का,
अमर वरदान युग का—
मुक्ति का, स्वातन्त्र्य का
दृढ़ शक्ति का, उत्सर्ग का ।
नूतन प्रगति-पथ पर सबल-रथ
तीव्र गति से राह समतल कर रहे हैं,
और प्रतिपल पथ के अवरुद्ध कण-कण,
दीर्घ भीषणतम, भयी फिसलन
कि काई ग्रस्त औ' काली शिलाएँ,
घोर प्रतिद्वन्द्वी हवाएँ,
मत्त चरणों से दबाते जा रहे हैं ।

ट्रैक के सदृश
वनान्तर पर बिना क्षण भर रुके
ये विश्व की बढ़ती हुई,
करती हुई मुठभेड़ अगणित शक्तियाँ
जब बढ़ रही हैं, लड़ रही हैं
स्वत्व, उन्नति, शांति का स्वर,

गान ले स्वातन्त्र्य का—
पद-चिह्न उनके देखकर,
इतिहास के विद्रोह पृष्ठों को;
बढ़ो तुम भी बढ़ो।

परतन्त्रता, अज्ञानता की बेड़ियों को
रूढ़ियों को तोड़ कर
तुम भव्यता प्राचीन के गुण गान के
बंदी उठो, बंदी उठो।
तुम भी प्रगतिमय शीघ्र होकर
विश्व के मुख पर दिखो।
देदीप्य बन, नक्षत्र से चमको।

सजग हो, उठ पड़ो ओ राष्ट्र सारे
आज तो हुँकार कर, ललकार कर।
युग क्षितिज पर जब रक्त जैसी
लाल आभा छा रही है,
चेतना जीवन प्रभाती चिह्न
स्वर्णिम- रश्मियों के आज पृथ्वी पर पड़े हैं,
देख जिनको विश्व सारा जग गया है।
और तुम सो ही रहे हो?
जग उठो तुम, जग उठो।
जब जग गया संसार।
हो पिछड़े हुए, आगे बढ़ो, आगे बढ़ो।
जब बढ़ गया संसार।

जिन्दगी की शाम

यह उदासी से भरी
लघु जिन्दगी की शाम

अपमानित, दुखी बैचेन,
युग-उर कीं तड़पती औ' सिसकती
जिन्दगी की शाम ।

मटमैला, तिमिर- आछन्न, धूमिल,
नील-वर्णा क्षितिज पर,
आहत, करुण, घायल, शिथिल,
टूटे हुए कुछ पक्षियों के पंख
प्रतिपल फड़फड़ाते ।
नापते सीमा गगन की दूर
जिनका हो गया तन चूर ।

धँधला चाँद —
भर कर नाश का उन्माद,
शोभाहीन,
जो सकुचा हुआ-सा
झाँकता है, ताकता है,
हो गया मुखड़ा
धरा को देखकर फीका,

सफेदी से गया बाता ।
कि है आलोक से रीता

गया रुक एक क्षण को
राह में आकर पवन ।
जर्जर गिरी ये फूस की
कुटियाँ पड़ी हैं

तोड़ती-सी दम,
घिरा बंदी हुआ जिनमे सघन तम;

मौन हरदम टूटती-सी, हाँफती-सी
श्वास का साथी पड़ा है

हड्डियों का ढेर-सा मानव ।
बना शव ।

मौनता जिसकी अखंडित,
धड़कता दुर्बल हृदय,
फौलाद से दुख के प्रहारों मे दमित,
अभिशाप ज्वाला का जला,
निर्मम व्यथा से जो दला,
जिसको सदा मृत नाश का

परिचय मिला,
जो दुर्दशा का पात्र ।

भागी, कटु हलाहल घूंट जीवन का,
मरण अभिसार का,
निर्जन भयानक पंथ का
केवल अकेला
औ' थका, प्यासा, बुभुक्षित
क्षीण राही ।

चीखता दीवार का कण-कण,
" मनुजता का पतन । "
असहाय हो निरुपाय
मानवता गिरी ।
अवसाद के काले घने
अवसान को देते निमन्त्रण
बादलों में मनु मनुजता आ घिरी ।
उद्यत हुआ मानव—
बिना संकोच जोंकों सा बना,
पी रक्त मानव का स्वयं ही ।
क्रूरतम तस्वीर है,
है क्रूरतम जिसकी हँसी,
विष की बुझी ।

पर, दब सकी क्या
मुक्त मानवता ?

सजग जीवन सबल
औ' दानवी पंजा
कि जो पल में झुकेगा,
जाएगा मुड़,
टूट कर मिट जाएगा सब ।
यदि मनुजता भर न जाए रोष से
पागल । दबा देगी गला ।
चाहे बना हो तेज छुरियों सी
सुदृढ़ फौलाद की दृढ़ हड्डियों से ।
नींद की ही अंगड़ाई,
नींद की हुंकार से ही
कँप-कँपा कर हिल पड़ेगी
यह धरा ।

जिस पर बना है—
भव्यता का
पूर्ण वैभव श्री
मधुरिमा सुख
कि इकतरफा महल,
लुंठित निमिष में !
ईंट हर पत्थर चटख कर
क्षीण जर्जरता कि मरणोन्मुख
पतन साक्षी कहेगा

चीख कर—
" विध्वंस हो विध्वंस !
बर्बरता, जटिलता औ' विषमता
ध्वस्त हो विध्वंस ! "

रक्तिम बन दिशाएं
लाल ज्वाला सी धधक ।
फोड़े पके से पीबमय फूटे फफक,
जन-चीत्कारें,
अश्व के दृढ़ खौर निर्मम नाल से
जो पद-दलित ।

युग-गीत-रोदन की
बिगड़ती टूटती सी स्वर कड़ी,
छा दिग-दिगन्तों में सहज
हो व्याप्त अणु-अणु में कसक सी,
वेदना सी क्रूर ।
उस चंगेज के बर्बर दमन-सी
हिंस्र । पशु ।
जलियानवाले बाग की
मृत आत्माओं की
धरा पर लोटती जो आबरू है।
क्योंकि गोली से भयंकर

तोड़ डाले हैं पटक घुटने,
फोड़ डाले शीश,
उन्नत माथ ।
जिन पर छा गई आ
शहीदी आग ।
जिन पर जल रही है
देश पर निज मुक्ति औ' उत्सर्ग की
तल भूमि सी भीषण
युगान्तर से हरारत तीव्र ।
जिसमें भस्म होगा,
नष्ट होगा, ध्वस्त होगा
तख्त तेरा ओ हुकूमत ।
फैलता ही जा रहा है
जुल्म औ' अन्याय ।
बर्बर लूट के इतिहास के
बढ़ पृष्ठ गढ़ते जा रहे हैं
मानवी कटु क्रूर अत्याचार गाथाएँ ।

करुणतम अश्रु के मोती गिरे
मानों कि जग मुख पर
गए छा ओस के कण,
चाहिए दिनकर
कि जो आकर सुखादे

पोंछले सारे अवनि के
प्यार से आँसू सजल ।
जिसमें खिलें भू त्रस्त
जीवन की चमक लेकर ।
चमक ऐसी कि जिससे
प्रज्वलित हो सब दिशाएँ,
जागरण हो ।
जन-समुन्दर हर्ष-दीर्घोन्नत-लहर
में सिहर
स्वर गा दे प्रभाती गान ।
वेदों के श्लोकों के सरीखा ।
बज उठे वीणा,
कि मरघट से उठेंगी
मूक तप बलिदान की
सोई हुई जन-आत्माएँ ।
और कवि का गीत,
औ' साहित्य
जीवन-कर्म की दृढ प्रेरणा दे,
चेतना का युग सबल
निर्मित करेगा ।

जब-जब

जब-जब बढ़ी थीं ये लहरें गरजती हुई
तब-तब चलाई थी नौका,

समुन्दर चकित था।

जब-जब ये चमकीं थीं बिजली तरजती हुई
तब-तब बढ़ाए कदम दृढ़,

निलय भी नमित था।

विश्वास है

विश्वास है—
यह एक दिन काली घटाओं से घिरा आकाश
खुल कर ही रहेगा।
धूप के दिन,
एक क्या अगणित धरा पर
ज्योति से हँसते हुए आ कर रहेंगे।
तुम रुको ना,
इस बरसते कल्प में मन के प्रवासी।
भीग जाने का कहीं भय रोक ले गति कौन।
तुम इतना करो विश्वास—
आगे लाल-किरणें राह में बिखरी मिलेंगी।
सूख जाएगा सभी जल
आज जो प्रति अंग को कंपित किए है।
हार जाएगा,
तुम्हारी उस सतत गतिवान धारा से
विरोधी मेघ,
जो जल कण अमित संचित किए है।

युग की अँधेरी इस गुफा में
एक मद्धिम दीप की आभा
कहीं जल रही है।

जो अँधेरे की सघनता में
कहीं खो सी गई है ।
तुम भी जलाओ दीप अपना,
एक से अगणित जलेंगे दीप ।
जो तम की अमा को छिन्न कर
नव पंथ की रचना करेंगे ।
क्यों कि,
भावी विश्व के विश्वास की
लौ जल रही है ।

इसलिए विश्वास है—
छाई हुई संध्या समय-संक्रान्ति की
धूमिल अँधेरी पार कर,
नव लाल जीवन का सबेरा
व्योम में ला कर रहेगी ।

बहुत हुआ बस रहने दो

दीख रही हैं भरी घृणा से
आज तुम्हारी आँखें।
चहरे की सिहरन बतलाती हैं
घोर उपेक्षा के भावों को,
और तुम्हारी मुक्त हँसी में
कितना व्यंग भरा है,
कितना अपमान भरा है।
बातों का आशय इतना संशयग्रस्त
कि बिलकुल भी पता नहीं पड़ पाता है
आज रहस्य तुम्हारा,
मेरे प्रति इस निर्मम आकर्षण का।
जिससे मैं बैचेन तड़प उठता हूं,
मूक सिनेमा के चित्रों के पात्रों के समान
होंठ उठाकर रह-रह जाता हूँ मौन।
कंठ से निकले स्वर
अन्दर ही पी जाता हूँ।
सुन लेता हूँ हर उलटी--सीधी बातें।
पर, मन भर-भर आता है—
कि कौन हो तुम जो मेरे चुप रहने पर
आपत्ति करो?
नाहक मुझ को तंग करो,
उकसाओ मैं बोलूं,

और तुम्हारी बेहूदी व्यर्थ निरर्थक
बातों का उत्तर दूँ ?
जिनका अर्थ नहीं कोई,
जो रुचि से मेल नहीं खातीं,
जिनको सुन कर लहरें तक
न हृदय में आ टकरातीं,
बहुत हुआ बस रहने दो।
मत समझो इस चुप्पी का अर्थ कि
मैं निरा मूर्ख बुद्धिहीन हूं,
मत समझो तन दुर्बल है तो
मन से भी शिथिल दीन हूं,
मेरे उर का प्याला
लबरेज़ भरा है जीवन-रस से,
मेरे अंतर की प्रत्येक धमनियों में
नूतन रक्त दौड़ रहा है
बिजली की रेल सरीखा।
मेरी आँखों में
स्नेह भरा है सागर-सा,
आत्मा का दृढ़ता, बल, स्वाभिमान
आज भरा है
सूरज की ज्वाला-सा अक्षय।
जिसको परिवर्तन औ' षड्यंत्र
मिटाने में कामयाब हो न सकेंगे।
जिसकी युग-युग से अविरल जलती लौ को

आज म्लान न हो पाएगी,
चाहे एक बूंद पैमाने पर
असमय टूट पड़े अगणित सूर्य--ग्रहण ।
निश्चय होगा प्रति अंग दहन ;
मत जूझो, मत पूछो आगे
बहुत हुआ बस रहने दो ।

मन

मोर--सा मन ,
फूल--सा तन,
उल्लसित पुलकित सरल
हो स्नेहमय
मदमत्त सुख की पा हिलोरें.
तप्त अंतर उष्णता भंगी बयारें
हो उठा चंचल ।
कि देखे जब गगन में
कृष्णवर्णी घोर 'निम्बस' मेघ,
सविता की प्रखरतम रश्मियों को ढक लिया ।
मानो विजन मरु से सहारा के
गुजरती जा रही है धूल
काली रेत,
छूने उच्च नभ की भव्यता को;
रज अवनि लघुता मिटा महिमामयी
उत्कर्ष ।
मेरी हड्डियों का, खून का
लघु पाँवभर के बोझ का
कुछ फड़फड़ाती नस लिये अंतर
उठा रे हर्ष से. उन्माद से
हिल डोल ।
मानो जमी कोई हिमालय के शिखर पर
बर्फ--चंदा--श्वेत शीतल झील सुन्दर
फट पड़ी हो ।
खिल पड़ी हो दूध--सी ।

कौन से सपने

कौन से सपने,
लगे अपने ?
निरंतर साधना साकार करने जो
हृदय तन से लगे तपने ।
अरे मन, बोल तो रे । कौन से सपने ?

भर रहे हैं शक्ति ऐसी—
दे रही जो प्रेरणा, गति, चेतना ।
घन फट रहे औ' उड़ रही है वेदना ।
उल्लास की प्रतिपल उमंगें,
उर-समुन्दर की तरंगें
उठ रही हैं,
गिर रही हैं ।
और चहरे पर नयी ही
आज रेखाएँ दिखाई दे रही हैं ।

कौन सा वर है ?
सुघर सुन्दर अमर जो श्रेष्ठतर है,
स्वप्नवत् से वास्तविक है,
मौन से जो स्वर मुखर है;
हो गया हलका कि जिससे बोझ जीवन का,
युगों की कामना का चित्र भी रंगीन ।
मन दाह शीतल—लीन ।

निशा का युग

अंधकार में डूबा हुआ घिरा संसार
समस्त नयन की सीमा तक का ।
गहन अंधकार बेछोर घोर ।
ग्रस्त सभी जिसके पंजे में—
लघु-लघु वस्तुएँ विश्व की, विशालतम प्रतिमाएँ,
सब शिव सुन्दर सत्य सार—
स्वच्छ, पवित्र, नए जीवन से उभरा हुआ स्वस्थ सार ।
औ' सब अशिव, असुन्दर, असत्य सार—
कुरूपा, गंदा, मैला, जीर्ण-शीर्ण,
उखड़ा हुआ, निर्जीव, सड़ा, मृत, घृणित सार ।
सड़कें, मकान, पशु, पक्षी, घास, पेड़ धूसरित मैदान,
मनुज, रंगीन मेघ, झिलमिल असंख्य तारक,
पार्थिव संचय सारा जीवन का लय ।
मानो जग को मृत शव समझ
मूक ठंडे दिल से,
अदृश शक्ति ने बिछा दिया हो
काला सा कफन ।

और जिसके भीतर जानदार देह
तड़प उठती हो बार-बार ।
रह-रह श्वास पंथ के लिए छिद्र एक पा
ठीक इसी प्रकार पथ-हारा मन

भूला भटका थकित, तृषित हो
खोज रहा संतत सत्य का आलोक ।
शोक में डूबा हुआ ।
कि मानो जीवन का अभिलाषी
सहम गया हो चारों ओर देख अंध कुआँ ।
गतिरोध ?
अरे इसका सदैव मानव गति से रहा विरोध ।
मानव तो गतिशील, नित्य अभिनव, परिवर्तित ।
उसके जीवन का है सत्य यही,
क्या उसकी यह स्वाभाविक गति रुकी कहीं ?
और लड़खड़ायी शिथिल हो छटपटाई क्या कभी ?
उसकी छाती पर से तो
लोहे के इन्जन जैसे अगणित ये
सघन-निशा के युग ढल जाएँगे ।
सहन किए हैं उसने बर्फीले युग,
आँधी भूकम्पो के युग,
ज्वाला के युग ।
भयभीत न हो
बदल न आंखें, पर,
खोज प्रकाश की नयी किरण ।
भर कर दिल में ज्योतिर्मय जग की आश,
अटल विश्वास ।
न हार, न हार कभी ।
माना फैला हुआ है
अंधकार हां अंधकार ।

जीवन-दीप

अँधेरा है, अँधेरा है।
कि चारों ओर काले अंध-तम का ही
बसेरा है।
कि जिसने सब दिशाओं को
कुटिल भय पाश में भर मौन घेरा है!
दिखाई कुछ नहीं देता।
पलक की नाव मेरी लय,
सघन-तम-सिन्धु में मैंने अनेकों बार
अविरत पुतलियों से घूर कर
देखा, क्षितिज में दूर तक,
पर, कुछ न सूझा :
और मेरी आत्मा का तम
घना होकर,
धुँआ सा बन,
बिखरते बादलों सा छा
हृदय में कर उठा चीत्कार।
छल रंगीन सा संसार।
धोखा है कि धोखा है।
सनातन यह अँधेरा यह,
सनातन प्राण का अंतिम बसेरा ही
अँधेरा है।

विवश हो काँपता मन,
काँपता जीवन,
जटिल हो बढ़ रही उलझन,
चमक का श्रेय ।
चारों ओर छा घनघोर,
संसृति में अँधेरा है ।
अँधेरा है ।

छिपे हैं भाव धुँधले से हृदय में,
और जीवन बह रहा
देखे बिना तम सामने,
जिसमें छिपी हैं
सर्वभक्षक नाश की प्रतिपग
कठिनतम यातनाएँ घोर,
चारों ओर ।
संशय औ' अधूरा ज्ञान ले, पर,
बह रहा है जिन्दगी का फूटता झरना ।
कि किंचित सोचना
रुकना यहाँ वरना ।
निमिष भर को थकित होकर,
अँधेरे से चकित होकर,
अशिव के सामने झुकना
बुरा होगा यहाँ वरना ।
जरा भी ठोकरों से हिल,

अवनि पर एक पल झुकना,
गिरा देगा ।
तुम्हारी बाहुओं का बल,
अथक संबल,
शिथिल होकर
भयावह काल के सम्मुख,
अँधेरे में सदा को
लुप्त हो मिट जाएगा ।
केवल तुम्हारी ज्योति
जीवन की हृदय की चेतना की
रोशनी से —
रह सकेगा मौन दृढ़ निष्कम्प,
फैले इस अँधेरे में
तुम्हारी साधना का दीप ।
अरुक उत्साह,
लिक्षत कामना का दीप ।

रात का आलम

ठंडी हो रही है रात ।
धीमी यंत्र की आवाज़,
रह-रह गूँजतीं अज्ञात ।
स्तब्धता को चीर देती है,
कभी सीटी कहीं से दूर इंजन की,
कहीं मच्छर तड़प भन-भन अनोखा शोर करते हैं,
चूहे भूखे निकल कर तोड़ का बढ़ ज़ोर करते हैं,
घड़ी घण्टे बजाती है ।
कि बाक़ी रुक गए सब काम,
स्थिर, गतिहीन, जड़, निस्पंद,
खोकर चेतना—बेहोश,
साँसें ले रही हैं जान,
हाँ अनजान ।

ऊँघते मज़दूर, पहरेदार, श्रमजीवी,
नशे में नींद के ऐसे—
कि मानों संगिनी कोई बुलाती है
इशारे से समझ परिचित थकी-सी
बाँह में आबद्ध हो सोने ।
कि मन औ' देह से इस बार
एकाकार लय होने ।
शिथिल ।

झकझोर जाती है,
कि रह-रह याद आती है,
अरे मिथ्या ! दया नादानगी पर
हाय अपने आप आती है।
कि ऐसी भूल भी कैसी
सदा जो भूल जाती है।
व जो हर बार दुहरायी हृदय में आज जाती है।

न सीमा है कहीं।
बेजोड़ है सारी अनोखी बात।
पर, है सत्य—
ठंडी हो रही है रात,
धुल कर चाँदनी से वात।
भारी हो रही चुपचाप,
अपने आप,
ऊपर बन रही है ओस,
धँधली पड़ रही है रात।

यह री कल खुलेगा रेशमी पट
मुग्ध-प्रकृति-वधू का गात।

सुनहरी आभा

छिपा चाँद काले उमड़ते घनों में,
उठा प्रबल झञ्झा लहरते बनों में,
गरजता गगन है।
हहरता पवन है।
कि कितनी भयानक अँधेरी घनेरी अकेली निशा है,
कि कितनी भयानक हमारे विजन-पंथ की यह दिशा है
हमें पर उसे भी सरलतम समझकर,
बितानी सबल बन व हँस कर निरंतर।

नहीं है समय स्वप्न को हम निहारें,
नहीं है समय रूप को हम सवाँरें,
नहीं है समय जो कहीं पर रुके हम,
नहीं है समय साँस ही ले सकें हम।
निरंतर प्रगति ध्येय होगा हमारा।
पहुँचना जहाँ प्रेय होगा हमारा।
सबेरा तभी श्रेय होगा हमारा।

उषा की चमकती हुई
लाल किरणें मिलेंगी,
नयी ज्योति ऐसी कि
हिल-हिल य' कलियाँ खिलेंगी।
व जीवन हमारा बदलता चलेगा,
समुन्दर हृदय का लहरता चलेगा,

कि अमा सुनहरी,
नयी सृष्टि सारी,
हमें फिर प्रकृति सब नई ही दिखेगी ।
कि सुन्दर व अभिनव
दमकती दिखेगी ।

प्रभात

रंगीन गगन,
ऊँचे पर्वत,
घाटी, मैदान,
कि फैली है सुनसान,
हरे-हरे अगणित पेड़
कतारों में खड़े सघन;
हिलते द्रुम-दल
प्रतिपल-प्रतिक्षण
बहता शीतल मंद पवन।
रंगीन गगन।
मेरा मन
बिस्तर पर लोट लगाता है,
ढीर भरी आँखें मींचे
नींद परी को दूर कहीं से
मौन बुलाता है।
मुन्नी जाग गई है
कहती जो—
सुबह हुआ,
ओ बाबूजी! उठो-उठो।'

ज्वार भर आया

नदी में ज्वार भर आया ।

प्रभंजन वेग-सा स्वर कर
नदी में ज्वार भर आया ।

प्रलय-हिल्लोल ऊँची आ
निलय मुख चूमने प्रतिपल
उठी बढ कर ।
सतत क्रम चल रहा अविरल—
किनारे टूटते जाते,
शिलाएँ बह रहीं हैं साथ,
भू को काटती
गहरी बनाती घाटियाँ जाती
अमित लहरें, बनी तलवार ।
आकर एक के उपरान्त,
नहीं हो शांत,
दृढ़तम तीव्र ।
लहर-लहर हहर कर आज ।

हर मैदान पर्वत वन
नगर औ' गाँव पर
यह दौड़ती सरिता ।
कि मानों लिख रहा कवि

वेग से कविता ।
बुलाता क्रान्ति की घड़ियाँ
भयंकर नाश का तूफान,
जन विद्रोह,
भीषण आग ।
नये गान की आंधी सरीखा

ज्वार भर आया ।
नदी में ज्वार भर आया ।

ज़िन्दगी

ज़िन्दगी ।
एक ढर्रे की बनी,
हर घड़ी अभिशापिनी,
सदियों सी बड़ी
किस काम की ?
जब नहीं है सनसनी ।

एक रस औ' एक स्वर
गूंजता प्रत्येक घर,
बोझ से जीवन हुआ भारी,
क्या यही है युक्त तैयारी ?
कि धारा राह में ठहरी,
व छायी भूत-सी
इस छोर से उस छोर तक
सुनसान-सी बीहड़ उदासी मौत की गहरी·
कि फैली है हृदय में रे
सड़ी-सी लाश की बदबू,
कि गन्दगी ऐसी—
कि सारी ज़िन्दगी दूभर
रुक गई थककर ।
नहीं है आज की यह ज़िन्दगी
इन्सान को अपनी सगी ।
छिः यह ज़िन्दगी ।।

—— ——

शिशिर-प्रभंजन

शीत ऋतु ।
तलवार की कटु-धार सा चलता पवन ।
निर्जन गगन में घन कहीं कड़का,
कहीं पर काँपती कारका ।
सघन तम,
बरसता है मेह,
दलदल राह में,
चंचल चले नव स्रोत,
जलधारा—
विजन गृह खेत सब जल मग्न,
कुटियाँ भग्न खंडित,
थरथराता वायु मंडल,
विश्व प्रांगण मध्य हलचल
गाय बकरी भैंस पशु,
जन वृद्ध शिशु रोगी तरुण
भू तरल पर
पेट में घुटने गड़ाए,
क्रुद्ध मदिरा के नशे में
सिहरते से, व्यर्थ बकते,
केश भूतों से बिखेरे,
वेष पागल का बनाए,

काटते भीषण दमन के इन युगों की रात क्षण-क्षण ।
सह रहे बर्बर नरक-सम काल्पनिक सब यातनाएँ ।
दुःख दाहक ले कभी रोते
कृशित-तन नग्न मरणासन्न शिशु,
तब ज्ञान ममता स्नेह खोकर
विश्व की दुर्गन्ध सारी गन्दगी से युक्त अंचल
को उठाकर शुष्क स्तन पर नारियाँ
शोषक करातीं खून का ।
है क्या यही विद्रोह की स्थिति ?
भर गया अब कष्ट की दुर्दम पवन से
क्रूर कटु अन्याय का बैलून ।
निश्चय ।
पास है विस्फोट का क्षण,
दे रहा प्रतिपल
चुनौती मुक्त आवाहन जगत् में,
क्रान्ति की प्रतिध्वनि भयंकर
गूंजती जाती निरंतर,
चल पड़ी है दूर से आंधी प्रलय,
करने विजय, जन लोक की,
परतन्त्रता की बेड़ियाँ,
कड़ियो पड़ी जो चरण में,
कर रुद्ध पथ
ये मध्य ही ऊँची खड़ी जो

शक्तिशाली पर्वतों की इस लरि
लड़खड़ाती टूटने की ।
विश्व के बंदी युगों के छूटने का ।
दे रही पग-ध्वनि सुनाई,
आज के विप्लव स्वरो की
चीत्कारें.
हृद्विदारक यातना की जो पुकारें—
मुक्ति आविर्भाव नवयुग की प्रखर संदेश वाहक ।
प्रति-चरण मृत ध्वंस पथ पर—
नव-सृजन की नींव का मजबूत पत्थर ।
चल रहा क्रम,
श्रम न किंचित,
गिर रहा आकाश से हिम,
और नयनों से सजल-कण ।

नया विश्वास

बर्फ़ की इन आँधियों में
आश की चिनगारियाँ कब तक जलेंगी ?
चिनगारियाँ—
जिन पर रही बिछ राख की परतें जतीं,
दग्ध अंतर में सुलगती उदास जीवन की रहेगी
और कब तक, जब
बिखरती डूबते-रवि की सभी ये रश्मियाँ नभ से चलीं ?
अति शीत तमसे घिर रही है रात जीवन की घनी ?
रात जो बढ़ती गई प्रतिपल
सती उस द्रौपदी के चीर-सी,
बात ठंडी हैं सभी हिम नीर सी;
विश्वास पीले पत्र-सा
झुक गया है हार कर,
और कबतक व्योम की छत प्राण की रक्षा करेगी ?
ओट अंचल की कहाँ तक,
इस गरजती मत्त तूफानी घड़ी में
दीप अंतर का बचाए यों रहेगी ?
(बुझ न जाए ।)
क्यों कि बाकी है अभी तो स्नेह,
क्या वह स्नेह यों ही व्यर्थ जाने के लिए हैं ?
व्यर्थ जाने के लिए बिलकुल नही है
यह जलाएगा प्रलय तक,
और अन्तिम बूंद तक,
हर श्वास तक,

इन उलझनों में दीप जीवन का प्रखर ।
बढ़ते युवा के तेज को
हर मौत के भीषण प्रहारों से
रखेगा ज्योति में डूबा हुआ,
चिनगारियाँ हैं ।
बर्फ़ से हिम नीर से
ये बुझ न पाएंगी कभी,
आँधियों से तो जलेंगी
और ऊँची बन अनेकों व्योम में लपटों सरीखी,
और तीखी ।
यह न सोचो—
दीप यह यों ही बुझेगा ।
यह बुझेगा—
जब जगत् का दृढ़ अटल विश्वास सारा
टूटते इन तारकों सा व्योम से रज में मिलेगा,
यह न सोचो—
थक गया है ज्वार सागर का उमड़ता.
देख लेना
कल उठेगा बाँधने को व्योम को फिर ।
क्योंकि मेरी बाहुओं में
शक्ति बनती और मिटती जा रही है ।
क्योंकि अंतर बल सदा
उठती हुई हर श्वास से बढ़ता चला ही जारहा है।
इन निकलती श्वास से समझो न यह
अब लौट कर फिर से न आएंगी कभी ।।

चाह

मेरी भावनाओं की अगर तस्वीर बन जाए,
तो खुशहाल उजड़े विश्व की तक़दीर बन जाए।

फूलों से मुहब्बत की, बहुत चाहा खिले उपवन,
पर, पतझर विजन की धूल में आया कहाँ जीवन।

मेरी कल्पनाओं में ग्रहण धुँधला समाया जो,
मेरी धारणाओं पर पुराना जंग छाया जो,

कर अवरुद्ध मेरी ज़िन्दगी की राह, बन पत्थर,
काले रंग जैसा, शून्य में आकर भटक घर-घर,

मुझको रोक लेता है, नयन में तोल लेता है,
'हो सरहद में मेरी,' कभी यह बोल लेता है।

प्राणों की धधकती आग में यदि नीर आ जाए,
तो उन्माद का स्वर सनसनाता तीर आ जाए।

मेरी भावनाओं की अगर तस्वीर बन जाए,
तो खुशहाल उजड़े विश्व की तक़दीर बन जाए।

धूल-श्री

सोफ़िया हरी-हरी,
डाल-डाल आज री भरी ।
हज़ार लाख बेशुमार
हिल रही कतार पर कतार,
वायु वेग से अपार बार-बार,
सन-सनन उठी पुकार ।
वृक्ष रूप का नया उभार ।
री उतर रही नयी युवा परी ।
सोफ़िया हरी--हरी,
डाल-डाल आज री भरी ।

मंद रंग लाल--लाल,
रक्त-सी भयावनी कराल,
आसमान की विशाल गाल;
आज रस भरीं डगाल
हैं किए सवौंर पत्र-जाल,
री सुहावनी हरीत चूंदरी ।
सोफ़िया हरी--हरी,
डाल-डाल आज री भरी ।

———

ध्वंस और सृष्टि

ध्वंस की आँधी चली है ।
मौत की घंटी बजी है ।
चीत्कारें,
दुख भरी व्याकुल पुकारें,
रक्त की नदियाँ
बही बन लाश की लड़ियाँ भयंकर,
नाश की घड़ियाँ गुजरती जा रही हैं ।
विश्व के भू खंड के प्रत्येक कण-कण से
जहाँ भी 'टारनेडो' ज्वार भीषण
देखकर बस बढ़ गया है,
और आगे साध साधे
देख बढ़ता जा रहा है—
दृश्य पुनरावृत्ति ।
झुलसी अग्नि का धू-धू शिराओं से
जली है पूर्ण मानवता ।
'बचाओ,' बोलता है कौन ?
मुख को खोलता है कौन ?
सब को है पड़ी अपनी
यहाँ पर जिन्दगी की आश की कोशिश ।
कहाँ माता, पिता, बच्चे ?
कहाँ हैं साथ ?
भगते तोड़ कर जो आज,
गूजा जग कराहों से

कि बोला जग—
'बचाओ रे, बचाओ रे ! '
प्रलय की अग्नि से आहत,
मरण की कल्पना से लोग घबराकर
प्रखर स्वर बोलते करुणा भरे—
'हा-हा बचाओ रे ! '
कि बरसे जोर से बादल ।
कि गरजे जोर से बादल ।
जगत में मच रही हलचल ।
नयी दुनिया बसाएँगे, बसाएँगे ।
उजड़ती बस्तियाँ हैं तो
उजड़ने दो ।
मनुज मिटते अगर हैं आज
मिटने दो ।
अशिव की आज पूर्णाहुति,
कि दानवता मिटे,
जिसके जले शव पर
नई दुनिया बसाएँगे ।
नया भूतल उठाएँगे ।
बहा देंगे समुन्दर प्रेम का, समता,
प्रगति, स्वातन्त्र्य का चहुँ ओर ।

मेरे हिंद की संतान

मेरे हिंद की संतान ।

तेरे नेत्र हों द्युतिमान,
तेरे मुक्त बल से युक्त, विद्युत से चरण गतिमान ।
मेरे हिंद की संतान ।

हर सोया हुआ इन्सान करवट ले उठा जागा,
कि जिसको आततायी देख उलटे पैर ले भागा,
जगे हैं सिंह निद्रा से
मिटा पापी अंधेरा अब
"ठहर जा ओ अरे पागल
कुचलता हूं अभी मैं शीश यह तेरा ।
कि बस अब डालदो घेरा"
सभी ने यों पुकारा है ।
करोड़ों के चरण फौलाद से
अन्याय की चट्टान से जूझे,
किसे रे आज क्या सूझे ।
असत् सत् का,
चमक तम का,
हुआ अभियान ।
खड़ी हो जा गठीली स्वस्थ फैली मुक्त छाती तान ।

मेरे हिंद की संतान ।

भूखी नग्न शोषित त्रस्त
तेरी भग्न जर्जर देह नत,
प्राचीनता के डगमगाते जीर्ण चरणों पर,
कि हालत आज है बेहद बुरी
मानों कसाई की छुरी से चोट खा
बैचेन हो चिल्ला उठा बकरा ।
दमित सब सर्वहारा वर्ग कुत्ते से गया गुजरा ।
करोड़ों मूक श्रमजीवी
उठो ! प्रतिशोध लो
नूतन सबेरे में,
तुम्हारे देश के विस्तृत कि फैले वायुमंडल में,
नयी किरणें,
लगी गिरने ।
कि मुट्ठी बांध कर गाओ
नया स्वाधीनता का गान ।
मेरे हिंद की संतान ।

— —

स्नेह की वर्षा

मेरे स्नेह की वर्षा ।
नहा लो
त्रस्त प्राणों के उबलते ज्वार ।
करलो शान्त जीवन के
धधकते लाल सब अंगार ।
मेरे प्यार की वर्षा ।

घुमड़कर हिद सागर से
सजल बादल,
घिरे नभ के किनारों तक,
बढ़े शीतल पवन के साथ,
करने शक्ति भर दृढ़ वार,
ऊँचे दुःख से निर्मित
हिमालय से बने पर्वत
अभागे देश के ऊपर,
कि मूसलधार जल वर्षा ।
नहा लो त्रस्त प्राणों के
उबलते ज्वार ।
मेरे स्नेह की वर्षा ।

उठी हैं अग्नि की लपटें प्रखर,

है सिन्धु-गंगा भूमि उर्वर
बंग श्यामल कुन्तला धरणी
झुलस आहत,
गगन से याचना का रूप
जीवन माँगती है,
नाश सीमा पर खड़ी होकर,
तुम्हारे विन्दु दो केवल
हिला शव को जगा देंगे ।
बरसलो आज देकर
पूर्ण अपने स्नेह-कण निर्मल ।
सजल कोमल ।
सरल अनुराग की वर्षा ।
कि मूसलधार जल वर्षा ।
नहा लो,
आज जीवन के
मलिन सब भाव धो डालो ।
युगों से त्रस्त,
पीड़ाग्रस्त,
मेरे देश के मानव
सहे तुमने
अनेकों युग दमन के,
आग में तृण से जले;
झोंके गए ।

अपमान क्या,
सब लूट कर भी ले गए
कटु आततायी क्रूर ।
हँसते व्यग से हो दूर ।
जिनने कर दिया है देश की
प्रत्येक जर्जर झोंपड़ी का
चोट के प्रति अंग
चकनाचूर ।
मेरे स्नेह की वर्षा ।

नहा लो,
त्रस्त प्राणों के उबलते ज्वार ।
मेरे प्यार की वर्षा ।
मेरे स्नेह की वर्षा ।

——

बदलो

अपने पथ को बदलो !
बदलो !
चिर-प्राचीन, अभ्यस्त, विषम
मग के प्रेमी, विश्वासी,
रूढ़ि ग्रस्त
संभ्रमहीन चरण
बढ़ जाते हैं राह बनी पर,
भेड़ सरीखे ।
नूतन—पथ का आज सुनो
आवाहन ।
जीवन का स्वर,
उन्नति, प्रगति निरंतर,
निर्भय, दृढ़, अथक
अपराजित ।
बदलो ।
अप थ को बदलो ।

———

जनरव

आलोकित विस्तृत जन-पथ ।
खड़े हुए विद्युत गतिमय
युग के जिस पर नूतन रथ ।
प्रस्तुत,
शक्ति सुसज्जित,
मन्वन्तर कर
नव-संस्कृति निर्मित हित,
प्रेरक स्वर
उन्मुक्त प्रखर अविजित
गूँज रहा जनरव ।
अभिनव ।
जन-पथ पर जन रव ।

मानव दुर्दम इस्पाती
अडिग अकम्पित चरणों के बल,
कदम-कदम पर नव-आवाहन दे,
चीर रहा छाए
उच्छृंखल अर्थ-व्यवस्था के घन ।
उपचार समाजी घावों का कर,
परिवर्तित,
आनन्दित वसुधा को कर.

वह करने प्रतिपादित सभ्यता नई !
जनयुग का संयमित सबल जन रव

विप्लव ।
यह जन-पथ
जिसका न कहीं
इति—अथ ।

पहली बार

विश्व के इतिहास में जनता सबल बन
आज पहली बार जागी है।
कि पहली बार बाग़ी है।

पुरानी लीक से हट कर,
बड़ी मज़बूत चट्टानी–रुकावट का
प्रबलतम धार से कर सामना डट कर,
विरल निर्जन कँटीली भूमि पथरीली

विलग कर, पार कर जन–धार,
उतरी मानवी–जीवन–धरातल पर।
सहज--अनुभूति--अंतस--प्रेरणा बल पर।

कि पहली बार छाई हैं
लताएँ रंग--बिरंगी ये।
कि जिनकी डालियों पर
देश की संकीर्ण रेखाएँ
सभी तो आज धुँधली हैं।

क्योंकि—
अंतर में सभी के एक से ही दर्द की
व्याकुल दहकती लाल चिनगारी।
नवीना सृष्टि रचने की प्रलयकारी।

कदम की एकता यह आज पहली है ।
तभी तो यह विरोधी चोट पहली है

गुजर गए हैं
हहरते क्रुद्ध भीषण अग्नि के तूफ़ान,
जिनका था नहीं अनुमान ।
सभी के स्वत्व के संघर्ष में युग-व्यस्त,
भावी सम वर्ष साधक ।
भुवन प्रत्येक जन अधिकार का रक्षक

केलीफोर्निया की मृत्युघाटी से,
कलाहारी, सहारा हब्स, टन्ड्रा से
मिटी लो निम्नतम पशुता ।
सभी संस्कृत-दिशा उन्मुख जगत जनता ।
विविध रूपा,
विपुल समुदाय,
रोता है नहीं निरुपाय ।
(हाय, हाय !)
क्योंकि—
उसको मिल गया
सुख-स्वर्ग का नव मंत्र,
मुक्त स्वतंत्र,
क्योंकि उसका विश्व अपना है,
नहीं उसके लिए कोई पराया, दूर सपना है ।

युगान्तर पूर्व त्रिभुवन का विसर्जन,
दृढ़ अटल विश्वास अनुशासन,
कि जुल्मी भावनाओं का
विनाशी आज निर्वासन ।

बुझते दीप फिर से आज जलते हैं ।
कि युग के स्नेह की अनुभूति ले
जल-जल मचलते हैं ।
सघन जीवन निशा विद्युत लिए मानो
अँधेरे में बटोही जा रहा हो टॉर्च ले,
जब-जब करें डगमग चरण,
तब-तब करें जगमग
य' जीवन पूर्णता का मग ।
कल्मष नष्ट,
पथ से भ्रष्ट ।

दूर कर आतंक,
नहीं हो नृप न कोई रंक ।
अभीतक जो रहे युग-युग उपेक्षित वे
सँभल कर सुन रहे विद्रोह की ललकार ।
पहली बार, है संसार का इतना बड़ा विस्तार ।
कि पहली बार, इतनी आज कुर्बानी अपार ।

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	१	विषय–सूचि	विषय-सूची
२	८	पीयुष–धारा	पीयूष–धारा
२	२२	इन्किलाब	इन्कलाब
६	८	मृत···	मृत्यु
६	११	दिशा	दिशाएँ
६	११	मटमै	मटमैली
१०	४	दहाड़े	दहाड़ें
१०	अन्तिम	इन्किलाब	इन्कलाब
१४	१५	चर	चरण
१४	१६	गर्व से हो जय	गर्व से जय
१६	१७	देती	करती
१८	५	की	का
२२	५	बंद	बूद
२२	१३	हिंसा	हिंसा,
३०	१	इन्किलाब	इन्कलाब
३१	४	इन्किलाब	इन्कलाब
३३	३	गूजा	गूँजा
३३	१५	रक्तप्लावित	रक्ताप्लावित
३६	१०	गजगी	गूंजेगी
३६	१४	प्रताडित	प्रताड़ित
३६	१२	नई रचना, नया विधान	(काट दीजिए)
४०	१०	हुँ	हूँ
४६	८	है	हैं
५२	४	साथ	हाथ
५२	१८	दुनियां	दुनिया
५४	१६	ना	नया
५७	१	जिन्दगी	ज़िन्दगी

५७	१४	धँधला	धुँधला
६७	३	तुम्हा ी	तुम्हारी
७१	१०	उल्ला	उल्लास
७६	अन्तिम	लि क्षत	लक्षित
७७	१४	ही	हो
७८	१६	धँधली	धुँधली
८०	१	अमा	आभा
८५	५	कारका	करका
८७	१	इत	दत
८८	१८	रहगी	रहेगी
९९	अन्तिम	अप	अपने
१०३	२	पहली	सहली
१०३	७	सम वर्ष	वर्ष सम

Telephone:-

Telegram:SUNSHINE.

हमारे प्रकाशन:—

१. **अधूरी मूरत** —कहानी संग्रह

लेखक—रांगेय राघव मू. २)

२. **जीवन के दाने** —कहानी संग्रह

लेखक—रांगेय राघव मू. १।)

३. **टूटती शृंखलाएं**—कविता संग्रह

लेखक—महेन्द्र भटनागर मू. १।।।)

४. **जीवन रेखा** —उपन्यास (प्रेस में)

५. **पाथेय** —कविता संग्रह (प्रेस में)

व्यवस्थापक—

कारवां प्रकाशन,

६३, बड़ा सराफा, **इन्दौर.**

नवजीवन प्रिंटिंग प्रेस, ६३, बड़ा सराफा, इन्दौर.